eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

भारतीय संस्कृति के शोधक : संत कबीर

[1]गोपाल सिंह
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर हिंदी, श्रीगाँधी महाविद्यालय सिधौली सीतापुर उ0प्र0

Received: 17 Dec 2023, Accepted: 15 January 2024, Published online: 01 February 2024

Abstract

कबीर दास बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार हैं। आपके व्यक्तित्व में योगी– बैरागी, दार्शनिक, भक्त तथा कवि आदि की प्रतिभा एक साथ विद्यमान है। कबीर भारतीय संस्कृति के ऐसे संत हैं जो साधक होने के साथ–साथ भारतीय संस्कृति के शोधक भी हैं। कोई भारतीय धर्म और संस्कृति में प्रवेश कर गई रूढ़ियों और अंधविश्वासों का खंडन करते हैं और जीव और ब्रह्म तथा जगत और ब्रह्मा में अभेद संबंध की स्थापना करते हैं। तथा समाज में असमानता और भेदभाव का खंडन भी करते हैं। किस–किस का तात्पर्य नहीं है की कबीर भारतीय संस्कृति व सनातन परंपरा का मजाक उड़ाते हैं या उसकी निंदा करते हैं बल्कि भारतीय संस्कृति को रूढ़िवाद और विश्वासों से मुक्त कर कबीर उसे और सुदृढ़ करने का प्रयत्न करते हैं।

बीज शब्द– सनातन, तत्वमसि, आध्यात्म, संस्कृति, कतेब।

Introduction

कबीर प्रतिभा के धनी ऐसे साहित्यकार हैं जिनके व्यक्तित्व में संत समाज सुधारक योगी बैरागी एवं कवि के रूप परस्पर मिले हुए हैं। इन सभी रूपों में कबीर का वास्तविक रूप एक संत का था। संत होने के कारण भारत की आध्यात्मिक संस्कृति कबीर की आत्मा में रची बसी थी। कबीर इस संस्कृति के परिणाम भी थे और कारण भी, आलोचक भी थे और उपासक भी, साधक भी थे और शोधक भी। कबीर भारतीय समाज के ऐसे चिकित्सक थे जो शरीर की रक्षा के लिए उसकी चीड़–फाड़ करने में भी पीछे नहीं रहते। वे स्वयं की भूमिका उस कुम्हार की तरह मानते हैं जो घड़े को सुंदर सुडौल और सुदृढ़ बनाने के लिये ऊपर से तो चोट करता है किंतु भीतर से चोट को सहनीय बनाने के लिए अपना हाथ भी लगाए रहता है। और इस तरह संस्कृति रूपी धारा परिष्कृत पुष्ट और प्रशस्त बनी रहती है।

कबीर आत्म त्याग की भावना को शोधक चरित्र की पहली अहर्ता मानते हैं। कबीर के अनुसार समाज का शोधन करने के पूर्व स्वयं का शोधन करना पड़ता है और व्यक्तित्व की पूर्णता के लिए अनेक बार सर्वस्व त्याग के लिए प्रस्तुत रहना पड़ता है। कबीर कहते हैं–

''हम घर जारा आपनां, लिए मुराड़ा हाथ
अब घर जालौं तास का, जो चलै हमारै साथ।''1

इस प्रकार का ध्वंस, सृजन का पहला सोपान होता है जो लोग इस मर्म को नहीं समझते वही कबीर को भारतीय संस्कृति का और स्पष्ट शब्दों में कहें तो सनातन धर्म का घोर निंदक बताते हैं। कबीर निंदक हैं अथवा शोधक इसे समझने के लिए कबीर की कविताई से होकर गुजरना पड़ेगा।

कबीर का वास्तविक स्वर निंदा आलोचना या दोष दर्शन का नहीं है बल्कि आस्था का है, बहुत गहरी आस्था का और वह आस्था है कबीर की अपने राम के प्रति। कबीर कहते हैं–

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

''जउ कासी तनु तजहि कबीरा रामहिं कौन निहोरा''2

उपर्युक्त पद का आरंभ कुछ इस प्रकार होता है–

लोका तुम हौ मति के भोरा ।

वस्तुत श्लोका तुम हौ मति के भोरा से आरंभ करके कबीर जिस क्रम में ''रामहि कहा निहोरा'' तक पहुंचते हैं उस क्रम को समझे बिना कबीर के शोधक रूप को नहीं समझा जा सकता।

यहां एक दिलचस्प बात यह है की शास्त्रज्ञ और पंडित कहे जाने वाले तुलसी अयोध्या कांड में लोकमत को वेद मत के समतुल्य महत्व देते हैं और लोक के कवि कहे जाने वाले कबीर यहां लोकमत को भ्रम का पर्याय बताते हैं। वस्तुत कबीर ने यहां लोक का उपहास नहीं उड़ाया है अपितु लोक में व्याप्त रूढ़ मान्यताओं और सड़ी गली परंपराओं को जीवन से निराकृत करने का प्रयत्न किया है, जिसे करे बिना स्वस्थ समाज का निर्माण नहीं हो सकता है। यही है ध्वंस को सृजन का साधन बनाने का सिद्धांत। कबीर का संपूर्ण जीवन इसी का विस्तार है। पहले वह धर्म व संस्कृति के विघातक तत्वों की पहचान करते हैं फिर उनके निराकरण का मार्ग तलाशते हैं और तदुपरांत अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। कबीर की यही विशेषता उन्हें समाज सुधार का दम्भ ना रखते हुए भी सच्चा समाज सुधारक बनाती है,दार्शनिक ना होते हुए भी तत्व ज्ञानी बनाती है और शिष्य होने की संपूर्ण विनम्रता के साथ उन्हें समाज का वास्तविक गुरु और पथ प्रदर्शक सिद्ध करती है।

कबीर रामानंद के शिष्य थे। वह वैष्णव मत में दीक्षित त्यागी साधु थे। अनेक स्थलों पर वे बहुत ही आत्मविश्वास पूर्वक स्वयं के हिंदू होने का दावा भी करते हैं। इसके बावजूद कबीर हिंदू धर्म की तमाम मान्यताओं आचार– व्यवहारों और साधना पद्धतियों का विरोध करते हैं। सबसे प्रमुख बात वह वैष्णव साधु होते हुए भी विष्णु की लीला और अवतार की धारणा का कठोर शब्दों में खंडन करते हैं।

मूर्ति पूजा वैष्णव मत का अनिवार्य घटक है किंतु कबीर इसका बहुत ही तीखे शब्दों में खंडन करते हैं। वह इस पर चोट करते हुए कहते हैं–

पाहन केरा पूतरा करि पूजै करतार।
इही भरोसै जे रहै ते बूड़ै काली धार।3

लीला और अवतारवाद तथा मूर्ति पूजा के स्थान पर कबीर निर्गुण निराकार ब्रह्म की उपासना का उपदेश देते हैं, जो सर्वत्र और सभी में विद्यमान है । कबीर के अनुसार जो परमात्मा के इस सर्वव्यापी स्वरूप को नहीं पहचानता वही भ्रम में पड़कर भटकता रहता है।

एकहि जोति सकल घट व्यापक दूजा तत्त न कोई।

कहै कबीर सुनौ रे संतौ भटकि मरै जनि कोई।4

कबीरदास परमात्मा के इस सर्वव्यापी स्वरूप के माध्यम से समाज में व्याप्त भेदभाव एवं ऊंच नीच की भावना का निषेध करते हैं। इस प्रकार से वह हजारों जातियों और पंथों में विभक्त समाज को एकता के सूत्र में पिरोने का कार्य करते हैं। वह ब्राह्मण और शूद्र के कृत्रिम विभाजनों को अनावश्यक मानते हैंदृ

एक बूंद ते सृष्टि रची है को बाभन को सूदा।[5]

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

इस प्रकार कबीर भी आदि शंकराचार्य की भांति परमात्मा के सर्वव्यापी स्वरूप में ही समस्त सृष्टि को सिरजने का कार्य कर रहे हैं। जहां सृष्टिकर्ता सृष्टि में और सृष्टि सृष्टिकर्ता में समाई हुई है। आचार्य शंकर की भांति इस अद्वैत संबंध की स्थापना करते हुए कबीर कहते हैं।

इसी प्रकार कबीरदास भारतीय समाज में व्याप्त वर्ण– आश्रम व्यवस्था की भी कटु निंदा करते हैं। यहां दिलचस्प बात यह है कि यह निंदा मात्र हिंदू समाज तक सीमित नहीं है, बल्कि नवप्रवेशी इस्लाम धर्म में भी आकर ले रहे उच्चऔर निम्न वर्गीय विभाजन को अपनी चपेट में लेती है। यहां दो उदाहरण दृष्टव्य हैं–

'जौ तूं बाभन बभनी जाया। तौ आन बाट होइ काहे न आया'6

तथा इसी प्रकार

'जे तूं तुरक तुरुकिनी जाया तौ
भीतरि खतना क्यूँ न कराया'[7]

उपयुक्त उदाहरण में संत कवि कबीरदास ने हिंदू और मुसलमान दोनों ही समुदायों में व्याप्त जातिगत श्रेष्ठटाबोध का मखौल उड़ाया है।

बहुधा धार्मिकता के आवरण में व्यक्ति अपने घोर अनैतिक आचरण और दुराचार से समाज का ध्यान हटाने का प्रयत्न करता है । ऐसा व्यक्ति समाज के लिए अभिशाप तो है ही साथ ही धर्म के उज्ज्वल स्वरूप को भी कलंकित कर देता है। इसीलिए कबीर समाज जीवन में व्याप्त रूढ़ियों, अंधविश्वासों के साथ–साथ धार्मिक साधना में प्रविष्ट हो चुकी विसंगतियों पर भी भी कम प्रहार नहीं करते।कबीरदास जी के अनुसार धर्म धारण करने की वस्तु है, प्रचार की नहीं, प्रदर्शन की तो बिल्कुल भी नहीं। वर्तमान समय में भी धर्म को फैशन की तरफ प्रयोग करने वालों की कमी नहीं है कबीर के अनुसार धार्मिक साधना या भक्ति खेल नहीं है बल्कि यह शीश को असि के सम्मुख करने के समतुल्य है।

धार्मिक क्षेत्र में प्रचलित वाह्य कर्मकांड अंधविश्वासों रूढ़ियों का खंडन तथा वेद और कितेब दोनों की निंदा करने के बावजूद कबीर भारतीय संस्कृति एवं हिंदू धर्म की अनेक मूलभूत मान्यताओं को न केवल स्वीकार करते हैं अपितु वह अपने को हिंदू कहलाने में भी किसी प्रकार का गुरेज नहीं करते। इसके कारण पर गहन विचार करते हुए डॉक्टर रामस्वरूप चतुर्वेदी कहते हैं–
आत्मालोचन की बड़ी प्रखर परंपरा हिंदू मानस की विशेषता है, कबीर जिसका श्रेष्ठतम रूप में प्रतिनिधित्व करते हैं। इसीलिए ..... किसी अन्य साहित्य या संस्कृति परंपरा में यह साहस नहीं होता कि उन्हें हथियाने की कुछ भी कोशिश करें। कबीर का होना सिर्फ हिंदू परंपरा में ही संभव है।[8]

एक अन्य तथ्य जिस पर कभी ध्यान नहीं दिया गया यह है कि हिंदू धर्म में व्याप्त अंधविश्वासों कर्मकांडों एवं रूढ़ियों का खंडन करने के साथ–साथ कबीर ने धर्मांतरण पर भी उतना ही तीखा व्यंग्य किया है। सही तरीके से विचार किया जाए तो इसमें कोई अंतर विरोध नहीं है क्योंकि रूढ़ि व अंधविश्वास जहां हिंदू धर्म को अंदर से खोखला कर रहे थे वहीं मसीही धर्म की कट्टरता उसके वाह्य शरीर पर आघात कर रही थी। कबीर हिन्दू धर्म की कुरीतियों को लेकर पंडा और पुरोहित पर तीखा व्यंग करते हैं किंतु जब बात बाहरी हमले की आती है तो ऐसे अवसरों पर कबीर उनके सामने तनकर खड़े हो जाते हैं।

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

यहाँ कबीर का एक पद दर्शनीय है–

सुन्नत कराई तुरक जौ होनाँ तौ औरति को का कहिए
अरध सरीरी नारि न छूटै तातैं हिंदू रहिए ।
....
छांड़ि कतेब राम भज बउरे जुलुम करत है भारी।
कबीर पकरी टेक राम की तुरक रहे पचि हारी।[9]

कबीर भारतीय संस्कृति के उस रूप का प्रतिनिधित्व करते हैं जो संपूर्ण चर–अचर सृष्टि में एक ही चेतना को व्याप्त मानती है तथा पिण्ड में ही ब्रह्मांड के दर्शन करती है। कीरी और कुंजर दोनों में तात्विक एकता को स्वीकार करने वाले कबीर ब्राह्मण और शूद्र के कृत्रिम भेदों का निराकरण करते हैं। कबीर मनुष्य और मनुष्य में ही नहीं अपितु प्राणी मात्र में तात्विक एकता की बात करते हैं साथ ही वह जीव और ब्रह्म में तादात्म्य भाव की स्थापना करते हैं। कीरी और कुंजर में एक ही चेतन सत्ता का विस्तार मानने वाले कबीर वस्तुतः कण–कण में ईश्वर का दर्शन करने वाले प्राचीन ऋषि मुनियों की परंपरा में आते हैं। यहूदी इस्लाम और ईसाई धर्म के विपरीत भारत की सनातन संस्कृति में मनुष्य को मूलतः पाप की संतान मानने की बजाय पूर्णतः शुद्ध परमात्मा का ही स्वरूप माना गया है। कबीर भी इसी मत के मानने वाले हैं। और वे यथा शक्ति इसका प्रसार भी करते हैं। कबीर आत्मा और परमात्मा में अद्वैत संबंध की स्थापना करते हैं और इस तर्क के आधार पर जीवात्मा भी उतनी ही पवित्र व निष्पाप है जितना परमात्मा। कबीर का यह चिंतन प्राचीन उपनिषदों की विचारधारा के पूर्णतः अनुकूल है। महर्षि बादरायण रचित ब्रह्म सूत्र में आत्मा और परमात्मा में अद्वैत भाव की अभिव्यक्ति चार महा वाक्यों के माध्यम से की गई है। यथा –अहम् ब्रह्मास्मि, अयंआत्मा ब्रह्म, तत्वमसि तथा प्रज्ञानंम ब्रह्म।

किंतु उपनिषदों की यह विचारधारा कालांतर में भेदमूलक दृष्टि का शिकार होकर अनेक रूढ़ि और अंधविश्वासों से ग्रस्त हो गई। इससे आध्यात्मिक जीवन का क्षरण होने लगा और धर्म अपनी वास्तविक शक्ति को खोने लगा ऐसे में भारत की आध्यात्मिक परंपरा को कबीर जैसा साधक मिला जिसने भारतीय समाज में व्याप्त व्याधियों की न केवल पहचान की बल्कि उन्हें दूर करने का सफल प्रयत्न भी किया । कबीर की कविता उस रेचक औषधि की तरह है जो शरीर से अपमार्जकों को बाहर निकाल कर उसे स्वस्थ करती है। इसीलिए यह कहने में अतिशयोक्ति नहीं होगी की कबीर भारतीय संस्कृति के साधक और शोधक दोनों हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1–डॉ पारसनाथ तिवारी,कबीर ग्रन्थावली हिंदी परिषद, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, पृष्ठ 160
2– पारसनाथ तिवारी, कबीर वाणी राका प्रकाशन प्रयागराज पृष्ठ 172
3– पारसनाथ तिवारी, कबीर ग्रन्थावली, हिंदी परिषद, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, पृष्ठ 224

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

4–पारसनाथ तिवारी,कबीर ग्रन्थावली ग्रन्थावली हिंदी परिषद, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, पृष्ठ 61
5–वही, पृष्ठ 181
6–वही, पृष्ठ 182
7–वही, पृष्ठ 182
8–डॉ रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिंदी काव्य का इतिहास, लोक भारती प्रकाशन, प्रयागराज ,2018 पृष्ठ 40
9–पारसनाथ तिवारी, कबीर ग्रंथावली ग्रन्थावली हिंदी परिषद, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, पद संख्या 178